[2018] 2 एससीआर 775

उपेन्द्र सिंह

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य।

(2018 की सिविल अपील संख्या 2356)

23 फरवरी, 2018

[ए. के. सीकरी व अशोक भूषण, माननीय न्यायमूर्तिगण]

सेवा विधि - नियमितीकरण - कब वैध नहीं है - अपीलकर्ता को प्रतिवादी संख्या 8, एक निजी महाविद्यालय द्वारा गैर-शिक्षण कर्मचारियों में ग्रेड III में नियुक्त किया गया था - प्रतिवादी संख्या 8 का नियंत्रण राज्य सरकार द्वारा ले लिया गया था और बिहार विश्वविद्यालय का एक 'घटक महाविद्यालय' बन गया था, जिसके बाद अपीलकर्ता को अवशोषित कर लिया गया था लेकिन कोई वेतन का भुगतान नहीं किया गया- इसके विरुद्ध रिट याचिका उच्च न्यायालय द्वारा निरस्त कर दी गई थी - याचिका में अपीलकर्ता का कथन कि राज्य सरकार के एक प्रस्ताव द्वारा 1991 में सेवाओं को नियमित करने का निर्णय लिया गया था, लेकिन अपीलकर्ता को इसका लाभ तब भी नहीं दिया गया जब वह उक्त प्रस्ताव में निहित सभी शर्तों को पूरा करता है। 13 अगस्त, 2003 को नियमितीकरण से इनकार करते हुए विशेष रूप से कहा गया कि अपीलकर्ता की प्रारंभिक नियुक्ति विधि के अनुसार नहीं थी - विश्वविद्यालय या सरकार महाविद्यालयों के उन कर्मचारियों की सेवाओं को नियमित करने के लिए सहमत हुई थी, जो संघटक महाविद्यालय बन गए थे, केवल इस शर्त पर कि उनकी प्रारंभिक नियुक्ति उचित प्रक्रिया का पालन करने के बाद हुई थी और वह भी स्वीकृत पद के सापेक्ष - आक्षेपित आदेश में कोई हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं।

अपील को निरस्त करते हुए, न्यायालय ने

कहा: 1.1 आक्षेपित निर्णय बिना किसी दोष के है और किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में, पूरा आधार जिस पर अपीलकर्ता द्वारा मामला स्थापित किया गया है, गलत प्रतीत होता है। अपीलकर्ता सहित व्यक्तियों के मामलों पर विश्वविद्यालय द्वारा विधिवत विचार किया गया था, जिसके आधार पर 13 अगस्त, 2003 को आदेश पारित किया गया था जिसमें नियमितीकरण से इनकार कर दिया गया था। इस आदेश में विशेष रूप से कहा गया है कि अपीलकर्ता की प्रारंभिक नियुक्ति विधि के अनुरूप नहीं थी। यह विज्ञापन के बिना किया गया था और चयन समिति द्वारा पैनल की कोई सिफारिश नहीं की गई थी। इतना ही नहीं, नियुक्तियां सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं की गई थीं। विश्वविद्यालय, या उस मामले के लिए, सरकार उन महाविद्यालयों के उन कर्मचारियों की सेवाओं को नियमित करने के लिए सहमत हुई थी, जो संघटक महाविद्यालय बन गए थे, केवल इस शर्त पर कि उनकी प्रारंभिक नियुक्ति उचित प्रक्रिया का पालन करने के बाद हुई थी और वह भी स्वीकृत पद के सापेक्ष। [पैरा 7]

1.2 नियमितिकरन से संबन्धित विधियों का विनिश्चय इस न्यायालय के संवैधानिक पीठ द्वारा *उमादेवी* के मामले में किया जा चुका है। उस मामले में निर्धारित विधि के लागू करने पर, यह स्पष्ट है कि विधि के विपरीत नियुक्त दैनिक वेतनभोगी के नियमितीकरण का प्रश्न ही नहीं उठता। निर्णय के इस अनुपात को अपीलकर्ता के अधिवक्ता द्वारा भी विवादित नहीं किया जा

सकता है। यही कारण है कि वह लगातार तर्क देती रहीं कि अपीलकर्ता की नियुक्ति उचित प्रक्रिया का पालन करने और विधि के अनुसार की गई थी। हालांकि, यह पत्रवाली से परिलक्षित नहीं होता। यह प्रासंगिक है कि 13 अगस्त, 2003 के आदेश, जिसके अंतर्गत अपीलकर्ता को उपरोक्त आधार पर नियमित करने से इनकार कर दिया गया था, उस समय अपीलकर्ता द्वारा विरोध भी नहीं किया गया था। *उमादेवी* मामले में, न्यायालय ने उन लोगों के लिए एक बार के उपाय के रूप में नियमित करने के लिए एक छोटी खिड़की खुली छोड़ दी जो दस साल से अधिक समय से तदर्थ/दैनिक मजदूरी के आधार पर काम कर रहे थे। हालांकि, यह भी शर्त के अधीन था कि उन्हें विधिवत स्वीकृत पद पर नियुक्त किया जाना चाहिए था। इसके अतिरिक्त, उनकी दस साल की अवधि की गणना करते समय, उन मामलों को बाहर रखा जाना था जहां ऐसे व्यक्ति न्यायालयों अथवा अधिकरण के आदेशों के पीछे काम करते रहे। उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में इन बारीकियों पर चर्चा की है और *उमादेवी* के मामले में दिए गए निर्णय का भी हवाला दिया था और कहा था कि उस मामले में सुझाए गए एकबारगी उपाय का लाभ अपीलकर्ता को नहीं दिया जा सकता है। [पैरा 8]

सचिव, कर्नाटक राज्य एवं अन्य बनाम उमादेवी एवं अन्य।

(2006) 4 एससीसी 1: [2006] 3 एससीआर 953 संदर्भित।

<u>वाद विधि संदर्भ</u>

[2006] 3 एससीआर 953	**संदर्भित**	**पैरा 8**

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 2356 वर्ष 2018

एलपीए संख्या 447 वर्ष 2013 में पटना उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 25.07.2013 के से

अपीलकर्ता के लिए अधिवक्ता, मीरा माथुर।

उत्तरदाताओं के लिए अधिवक्तागण सुभ्रो सान्याल, अभिनव मुखर्जी, सुश्री बीनू शर्मा, सुश्री पूर्णिमा कृष्णा, सिद्धार्थ गर्ग, अजय कुमार तलेसरा, अतुल झा, संदीप कुमार झा।

न्यायालय का निर्णय माननीय न्यायमूर्ति ए. के. सीकरी द्वारा दिया गया

1. अपीलकर्ता ने पटना उच्च न्यायालय द्वारा 25 जुलाई, 2013 को दिए गए निर्णय को चुनौती दी है, जिसमें अपीलकर्ता द्वारा दायर लेटर्स पेटेंट अपील (एलपीए) को निरस्त कर दिया गया था। वास्तव में, उक्त सामान्य निर्णय द्वारा, दो एलपीए तय किए जाते हैं। एक एलपीए तीन लोगों ने और दूसरी आठ लोगों ने योजित की थी। ये सभी ग्यारह व्यक्ति, जो थाना गोगरी, जिला खगड़िया, बिहार के अधिकार क्षेत्र में स्थित एक केडीएस महाविद्यालय (इन कार्यवाहियों में प्रतिवादी संख्या 8) द्वारा नियुक्त किए गए थे, अपनी सेवाओं को नियमित करना चाहते थे और इस तरह के नियमितीकरण के आधार पर वेतन का भुगतान कराना चाहते थे। उनकी रिट याचिका को एकल न्यायाधीश द्वारा निरस्त कर दिया गया था और अंतर-न्यायालय अपील का भी यही हश्र हुआ है। हालांकि, ऐसा प्रतीत होता है कि ग्यारह व्यक्तियों में से, जो उपरोक्त दो एलपीए में अपीलकर्ता थे, केवल अपीलकर्ता ने इसमें परिणाम से असंतुष्ट महसूस करते हुए इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

2. अपीलकर्ता द्वारा स्थापित मुख्य मामला यह है कि, इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब अपीलकर्ता को नियोजित किया गया था, प्रतिवादी संख्या 8 एक निजी महाविद्यालय था,

हालांकि, इसे अंततः राज्य सरकार द्वारा ले लिया गया था और यह बिहार विश्वविद्यालय से संबद्ध हो गया था। यह कहा गया है कि अपीलकर्ता द्वारा प्रदान की गई लंबी सेवा के साथ-साथ ऐसे व्यक्तियों को नियमित करने के लिए विश्वविद्यालय के अधिकारियों के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, वह भी इसका हकदार था। हालांकि, इससे इनकार किया जाता है और उन्हें पिछले एक दशक से अधिक समय से उनके नियमित वेतन का भुगतान नहीं किया गया है। दावा निम्नलिखित कथनों पर आधारित है:

3. प्रतिवादी संख्या 8 के शासी निकाय ने शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए एक चयन समिति का गठन किया और इस समिति ने एक विज्ञापन के माध्यम से भर्ती की उचित प्रक्रिया का पालन करने और उसके बाद साक्षात्कार पर चयन के बाद वर्ष 1980 में, 24 जनवरी, 1978 से गैर-शिक्षण श्रेणी में ग्रेड III में अपीलकर्ता की नियुक्ति की। बिहार सरकार द्वारा एक निर्णय लिया गया था कि बिहार विश्वविद्यालय सहित कुछ विश्वविद्यालयों से संबद्ध महाविद्यालयों को विश्वविद्यालय के 'घटक महाविद्यालयों' के रूप में परिवर्तित किया जाए, जिसके आधार पर प्रतिवादी संख्या 8 भी बिहार विश्वविद्यालय का एक घटक महाविद्यालय बन गया। इस निर्णय को प्रतिवादी संख्या 8 द्वारा भी लागू किया गया था और 16 जून, 1981 से प्रतिवादी संख्या 8 ने संघटक महाविद्यालय का दर्जा प्राप्त किया। इसके बाद, प्रतिवादी संख्या 8 ने अपीलकर्ता सहित सभी कर्मचारियों को अवशोषित कर लिया और अपीलकर्ता उसके बाद प्रतिवादी संख्या 8 की सेवा में बना रहा। हालांकि, चूंकि विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने अपीलकर्ता और ग्रेड III और ग्रेड IV के कुछ अन्य कर्मचारियों को वेतन का भुगतान नहीं किया, हालांकि उन्हें सेवा में जारी रखा गया था, महाविद्यालय कर्मचारी संघ द्वारा इस संबंध में प्रत्यावेदन दिए गए थे। यद्यपि, शुरू में आश्वासन दिए गए थे, लेकिन उन्हें पूरा नहीं किया गया, जिसके कारण कर्मचारी संघ ने आंदोलन शुरू किया और इसे जारी रखा। अंततः, बिहार राज्य और बिहार उच्च शिक्षा विभाग ने 26 अप्रैल, 1989 को बिहार राज्य विश्वविद्यालय और महाविद्यालय कर्मचारी संघ के साथ एक समझौता किया, जिसमें स्टाफिंग पैटर्न के आधार पर अपीलकर्ता सहित कर्मचारियों को अवशोषित करने पर सहमति व्यक्त की गई। उस निर्णय के आधार पर, प्रतिवादी संख्या 8 ने अपने कर्मचारियों के दस्तावेजों की जांच की और 22 दिसंबर, 1989 को सरकार को अपने पत्र के माध्यम से अपीलकर्ता सहित गैर-शिक्षण कर्मचारियों के नामों की सिफारिश की। ऐसे सभी नामों पर विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त तीन सदस्यीय कर्मचारी समिति द्वारा विचार किया गया था, जिसने दस्तावेजों का निरीक्षण किया था, हालांकि, कोई अंतिम निर्णय नहीं लिया गया। इन परिस्थितियों में, जब मामले में देरी हो रही थी, अपीलकर्ता और अन्य ने वर्ष 1997 में उच्च न्यायालय में रिट याचिका योजित की, जिसका 05 मई, 1999 को निस्तारण करते हुए राज्य सरकार को जल्द से जल्द उचित निर्णय लेने का निर्देश दिया गया। इसके बाद, मामले पर विचार किया गया और अंततः बिहार विश्वविद्यालय ने 30 अगस्त, 1999 / 15 सितंबर, 1999 को आदेश जारी किया, जिसमें अपीलकर्ता सहित इन कर्मचारियों के दावों को निरस्त कर दिया गया और उन्हें महाविद्यालय में काम नहीं करने का निर्देश दिया गया। इस कार्रवाई को रिट याचिकाएं योजित करके चुनौती दी गई थी, जिसे स्वीकार कर लिया गया और अपीलकर्ता व कुछ अन्य लोगों को रोजगार में वापस ले लिया गया था। हालांकि, उन्हें नियमित कर्मचारियों के वेतन का भुगतान नहीं किया गया। इसके बाद भी, मुकदमेबाजी के कुछ दौर हुए जब रिट याचिकाएं योजित की गईं जिनमें उच्च न्यायालय द्वारा इन व्यक्तियों के दावे पर विचार करने के आदेश पारित किए गए थे और उन विवरणों को देना आवश्यक नहीं है। यह कहना पर्याप्त है कि एक मुद्दा यह था कि क्या स्वीकृत पद थे अथवा नहीं जिसके सापेक्ष इन व्यक्तियों के मामलों पर विचार किया जा सके। अपीलकर्ता के अनुसार, प्रतिवादी संख्या 8 ने 11 जून, 2009

के पत्र के माध्यम से विश्वविद्यालय को सूचित किया कि महाविद्यालय के लिए पच्चीस पद स्वीकृत हैं, जिनमें से पंद्रह पद ग्रेड IV कर्मचारियों के लिए और दस ग्रेड III कर्मचारियों के लिए थे। इसके बावजूद, कोई निर्णय नहीं लिया गया और अंततः अपीलकर्ता और कुछ अन्य कर्मचारियों द्वारा रिट याचिका संख्या 16667 वर्ष 2010 योजित की गई, जिसे 01 फरवरी, 2013 को उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा निरस्त कर दिया गया था। इस निर्णय के विरुद्ध है, प्रश्नगत लेटर पेटेंट अपील योजित किए गए थे, जिन्हें आक्षेपित निर्णय द्वारा निरस्त कर दिया गया।

4. अपीलकर्ता द्वारा स्थापित मामला, संक्षेप में, यह है कि अपीलकर्ता दो दशकों से अधिक समय से काम कर रहा है; उसे भर्ती की उचित भर्ती प्रक्रिया का पालन करने के बाद प्रतिवादी संख्या 8 द्वारा नियुक्त किया गया था; नियुक्ति स्वीकृत पद के सापेक्ष थी; प्रतिवादी संख्या 8 महाविद्यालय को "संघटक महाविद्यालय" का दर्जा प्राप्त करने के बाद, विश्वविद्यालय ने नियमित कर्मचारियों के वेतन का भुगतान करने से इनकार कर दिया; और यद्यपि इस संबंध में पहले ही राज्य सरकार के एक संकल्प द्वारा 10 मई, 1991 को स्टाफिंग पैटर्न के आधार पर सेवाओं को नियमित करने का निर्णय लिया गया था, लेकिन अपीलकर्ता को इसका लाभ तब भी नहीं दिया गया जबकि वह उक्त संकल्प में निहित सभी शर्तों को पूरा करता है।

5. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि रिट न्यायालय के साथ-साथ अपीलीय न्यायालय ने पूरी तरह से गलत आधार और धारणा पर कार्रवाई की है कि सरकार किसी भी स्तर पर अपीलकर्ता और अन्य को नियमित करने के लिए सहमत नहीं हुई थी। उन्होंने कथन किया कि राज्य सरकार पहले ही इस तरह के नियमितीकरण के लिए सहमति दे चुकी है, लेकिन किसी न किसी बहाने से इसके कार्यान्वयन में देरी कर रही है। राज्य सरकार की यह सहमति विश्वविद्यालय और महाविद्यालय कर्मचारी संघ के साथ 26 अप्रैल, 1989 के समझौते में दर्ज की गई थी, जिसके बाद विश्वविद्यालय, राज्य सरकार और प्रतिवादी संख्या 8 के बीच विभिन्न अन्य दस्तावेजों का आदान-प्रदान किया गया था। यह भी तर्क दिया गया कि उच्च न्यायालय ने गलत तरीके से इस आधार पर कार्यवाही की कि अपीलकर्ता को 12 जुलाई, 1980 की कट ऑफ तारीख के बाद नियुक्त किया गया था, जबकि पत्रवाली से पता चलता है कि उसे उससे बहुत पहले, यानी 24 जनवरी, 1978 को नियुक्त किया गया था।

6. दूसरी ओर, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता अवर न्यायालयों द्वारा अपनाए गए तर्क को सही ठहराया और तर्क दिया कि अपीलकर्ता का मामला स्टाफिंग पैटर्न पर पारित प्रस्ताव द्वारा आच्छादित नहीं किया गया था, क्योंकि अपीलकर्ता की नियुक्ति के समय न तो स्वीकृत पद थे और न ही उसके बाद ऐसा कोई पद अस्तित्व में था, न ही उसे स्वीकृत पद के विरुद्ध या उचित प्रक्रिया का पालन करने के बाद नियुक्त किया गया था। उन्होंने कथन किया कि अपीलकर्ता या इसी तरह स्थित व्यक्तियों की नियुक्ति प्रतिवादी संख्या 8 द्वारा स्वयं की गई थी और जब प्रतिवादी संख्या 8 संघटक महाविद्यालय बन गया, तो विश्वविद्यालय उन व्यक्तियों को नियमित नहीं करने के अपने अधिकार के भीतर था, जिन्हें स्वीकृत पद के सापेक्ष नियुक्त नहीं किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने बिहार विश्वविद्यालय विधिक नियमावली (भाग -1) के खंड (1) का हवाला दिया जो कुलपति की नियुक्ति और शक्तियों से संबंधित है और इसके उप-खंड (6) में कहा गया है कि यह कुलपति है जिसे स्वीकृत ग्रेड और वेतनमान के भीतर और मंत्रालयिक कर्मचारियों की स्वीकृत संख्या के भीतर पद पर नियुक्ति करने की शक्ति है। इसका तात्पर्य है कि न केवल कुलपति को शक्ति दी जाती है, बल्कि वह केवल उन पदों के सापेक्ष नियुक्ति कर सकता है, जो स्वीकृत ग्रेड के भीतर भी हों।

7. संबंधित तर्कों पर विचार करने के बाद, हमारा विचार है कि आक्षेपित निर्णय बिना किसी दोष के है और किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में, पूरा आधार जिस पर अपीलकर्ता द्वारा मामला स्थापित किया गया है, गलत प्रतीत होता है। हम नोट करते हैं कि अपीलकर्ता सहित इन व्यक्तियों के मामलों पर विश्वविद्यालय द्वारा विधिवत विचार किया गया था, जिसके आधार पर 13 अगस्त, 2003 को नियमितीकरण से इनकार करते हुए आदेश पारित किया गया था। इस आदेश में विशेष रूप से कहा गया है कि अपीलकर्ता और अन्य की प्रारंभिक नियुक्ति विधि के अनुरूप नहीं थी। यह विज्ञापन के बिना किया गया था और चयन समिति द्वारा पैनल की कोई सिफारिश नहीं की गई थी। इतना ही नहीं, नियुक्तियां सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं की गई थीं। हम पाते हैं कि विश्वविद्यालय अथवा उस मामले के लिए सरकार उन महाविद्यालयों के उन कर्मचारियों, जो संघटक महाविद्यालय बन गए थे, की सेवाओं को नियमित करने के लिए केवल इस शर्त पर सहमत हुई थी कि उनकी प्रारंभिक नियुक्ति उचित प्रक्रिया का पालन करने के बाद हुई थी और वह भी स्वीकृत पद के सापेक्ष। प्रतिवादी के अधिवक्ता द्वारा एक अतिरिक्त बयान दिया गया कि अब भी कोई स्वीकृत पद नहीं हैं।

8. नियमितीकरण से संबंधित विधि अब ***सचिव, कर्नाटक राज्य और अन्य बनाम उमादेवी और अन्य,*** **(2006) 4 एससीसी 1** में इस न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय द्वारा आधिकारिक रूप से निर्धारित किया गया है। उस मामले में निर्धारित विधि के अनुपालन पर, यह स्पष्ट है कि विधि के विपरीत नियुक्त दैनिक वेतनभोगी के नियमितीकरण का प्रश्न ही नहीं उठता। फैसले के इस अनुपात को अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा भी विवादित नहीं किया जा सकता है। यही कारण है कि वह लगातार तर्क देती रही कि अपीलकर्ता की नियुक्ति उचित प्रक्रिया का पालन करने और विधि के अनुरूप की गई थी। हालांकि, यह पत्रवाली से परिलक्षित नहीं किया गया। यह प्रासंगिक है कि 13 अगस्त, 2003 के आदेश, जिसके अंतर्गत अपीलकर्ता को उपरोक्त आधार पर नियमित करने से इनकार कर दिया गया था, उस समय अपीलकर्ता द्वारा विरोध भी नहीं किया गया था। *उमादेवी* मामले में, न्यायालय ने उन लोगों के लिए एक बार के उपाय के रूप में नियमित करने के लिए एक छोटी खिड़की खुली छोड़ दी जो दस साल से अधिक समय से तदर्थ/दैनिक मजदूरी के आधार पर काम कर रहे थे। हालांकि, यह भी शर्त के अधीन था कि उन्हें विधिवत स्वीकृत पद पर नियुक्त किया जाना चाहिए था। इसके अतिरिक्त, उनकी दस साल की अवधि की गणना करते समय, उन मामलों को बाहर रखा जाना था जहां ऐसे व्यक्ति न्यायालयों अथवा अधिकरण के आदेशों के पीछे काम करते रहे। उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में इन बारीकियों पर चर्चा की है और *उमादेवी* के मामले में दिए गए निर्णय का भी उल्लेख किया था और कहा था कि उस मामले में सुझाए गए एकबारगी उपाय का लाभ अपीलकर्ता को निम्नलिखित कारणों से नहीं दिया जा सकता है:

> "अपीलकर्ता स्पष्ट रूप से उमादेवी (उपरोक्त) के पैराग्राफ-53 में देखे गए अपवाद में आते हैं जैसा की उनके दावे सी.डब्ल्यू.जे.सी. सं. 12235 वर्ष 2005 के लम्बित होने को दृष्टिगत रखते हुए संवैधानिक पीठ की घोषणा की तिथि पर विचाराधीन थे, जिसे परिणामस्वरूप 29.09.2006 को निस्तारित कर दिया गया। रोजगार में इस तरह की विवादी निरंतरता को उमादेवी के निर्देशों से बाहर रखा गया है।
>
> अपीलकर्ताओं का दावा है कि उन्हें स्टाफिंग पैटर्न के भीतर नियमित किया गया है। हमारी राय में, यह मामले का सार नहीं है। महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या प्रबंध समिति द्वारा उनकी प्रारंभिक नियुक्ति खुले विज्ञापन और प्रतिस्पर्धी योग्यता चयन द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के अनुरूप थी। एम.एल. केसरी (उपरोक्त) की एक से अधिक पीठों द्वारा विभिन्न निर्वचनों के कारण पूर्ण पीठ को संदर्भित किया

गया था। हमने दिनांक 13-08-2003 के नियमितीकरण को अस्वीकार करने वाले आदेश से पहले ही देखा है कि दैनिक वेतन पर अपीलकर्ताओं की नियुक्ति विधि के अनुरूप नहीं थी। पैराग्राफ 43 में राम सेवक यादव (उपरोक्त) में निष्कर्ष इस प्रकार है: "43 (क) उमा देवी (उपरोक्त) दैनिक वेतन भोगी, आकस्मिक, तदर्थ और अस्थायी नियुक्तियों के नियमितीकरण पर प्रतिबंध लगाती है, सेवा की अवधि अप्रासंगिक है; (ख) खुली प्रतिस्पर्धी चयन के बिना अनुच्छेद 14 के अधिदेश के विपरीत शुरू से की गई अवैध नियुक्ति को किसी भी परिस्थिति में नियमित नहीं किया जा सकता है। (ग) अनियमित नियुक्तियों को नियमित किया जा सकता है यदि नियुक्ति ऐसा करने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा की गई थी, यह संविधान के अनुच्छेद 14 के अनुसार, एक रिक्त स्वीकृत पद पर प्रतिस्पर्धी चयन द्वारा पात्र अन्य लोगों को भागीदारी के समान अवसर के साथ किया गया था और उम्मीदवार के पास पद पर नियमित नियुक्ति के लिए पात्रता योग्यता थी। (घ) नियुक्ति केवल नियुक्त व्यक्ति को व्यक्तिगत लाभ नहीं दी जानी चाहिए और वह व्यक्ति किसी भी न्यायालय के आदेश के हस्तक्षेप के बिना दस साल से अधिक समय तक सेवा में रहना चाहिए।"

9. इस प्रकार, हमारा विचार है कि इस अपील में कोई बल नहीं है, जिसे तदनुसार निरस्त किया जाता है। कोई लागत नहीं।

अपील निरस्त।

अनुवादकर्ता
मणि यज्ञेश त्रिपाठी
अधिवक्ता,
इलाहाबाद उच्च न्यायालय